वर्ष 12, अंक 40, जनवरी -मार्च 2022

मूल्य ₹120/-

UGC Care Listed

त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका

ISSN-232[illegible]-1534 Nagfani RNI No. UTTHIN/2013/34408

नागफनी

अस्मिता, चेतना और स्वाभिमान जगाने वाला साहित्य

नागफनी

A Peer Reviewed Referred Journal

(अस्मिता, चेतना और स्वाभिमान जगाने वाला साहित्य)

UGC Care Listed त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका

ISSN-2321-1504 Naagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408

वर्ष 12, अंक 40, जनवरी - मार्च 2022

संपादक
सपना सोनकर

सह-संपादक
रूपनारायण सोनकर

कार्यकारी संपादक
डॉ. एन. पी. प्रजापति
प्रोफेसर बलिराम धापसे

अतिथि संपादक
प्रोफेसर दिनेश कुशवाह

सलाहकार मंडल (Peer Review Committee)

प्रोफेसर विष्णु सरवदे, हैदराबाद (तेलंगाना)
प्रोफेसर किशोरी लाल रैगर, जोधपुर (राजस्थान)
प्रोफेसर आर.जयचंद्रन तिरूअनंतपुरम (केरल)
डॉ. एन. एस. परमार, वड़ोदा (गुजरात)
डॉ. दिलीप कुमार मेहरा, बी.बी. नगर (गुजरात)
प्रोफेसर विजय कुमार रोड़े, पुणे (महाराष्ट्र)
प्रोफेसर संजय एल. मादार, धारवाड (कर्नाटक)
प्रोफेसर गोविन्द बुरसे, औरंगाबाद (महाराष्ट्र)
डॉ. दादासाहेब सालुंके, औरंगाबाद(महाराष्ट्र)
प्रोफेसर अलका गड़करी, औरंगाबाद (महाराष्ट्र)
डॉ. साहिरा बानो बी. बोरगल, हैदराबाद (तेलंगाना)
डॉ. बलविंदर कौर, हैदराबाद (तेलंगाना)
डॉ.उमाकांत हजारिका,शिवसागर (असम)

मुख पृष्ठ- डॉ.शेख आजम, मैत्री आफिक्स, सावंगी (ह), औरंगाबाद

प्रकाशन/मुद्रण

प्रकाशक रूपनारायण सोनकर की अनुमति से डॉ. एन. पी. प्रजापति एवं प्रोफेसर बलिराम धापसे द्वारा
नमन प्रकाशन 423/A अंसारी रोड दरियागंज, नई दिल्ली 11002 में प्रकाशन एवं मुद्रण कार्य

संपादकीय / व्यवस्थापकीय कार्यालय

दून व्यू काटेज स्प्रिंग रोड, मसूरी-248179, उत्तराखण्ड दूरभाष: 0135-6457809 मो. 09410778718

शाखा कार्यालय

पी.डब्ल्यू. डी.आर-62 ए. ब्लाक कालोनी बैढ़न, जिला-सिंगरौली म.प्र. 486886, मो. 097529964467

सहयोग राशि-150/- रुपये, वार्षिक सदस्यता शुल्क (संस्था के लिए)-1000, रुपये पंचवार्षिक सदस्यता शुल्क (व्यक्ति के लिए)-2000/- रुपये
पंचवार्षिक संस्था और पुस्तकालयों के लिए 3000/- रूपये, विदेशों में $50 आजीवन व्यक्ति 6000/- रुपये 10000/- रुपये

सदस्यता शुल्क एवं सहयोग राशि-इंडिया पोस्ट पेमेंट बैंक AC8367100138282 IFSC Code-IPOS0000001,Branch -SIDHI(NIRAT Prasad Prajapati)

नोट - पत्रिका की किसी भी सामग्री का उपयोग करने से पहले संपादक की अनुमति आवश्यक है। संपादक - संचालक पूर्णतय अवैतनिक एवं अव्यावसायिक है। नागफनी में प्रकाशित शोध-पत्र एवं लेख, लेखकों के विचार उनके स्वय के है, जिनसे संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं। "नागफनी" से सबंधित सभी विवादास्पद मामले केवल देहरादून न्यायालय के अधीन होंगे। अंक में प्रकाशित सामग्री के पुनर्प्रकाशन के लिए लिखित अनुमति अनिवार्य है। सारे भुगतान मनीआर्डर बैंक चेक - बैंक ड्राफ्ट - ई-पेमेंट आदि से किये जा सकते है। देहरादून से बाहर के चेक में बैंक कमीशन 50/- अतिरिक्त जोड़ दें।

लेख भेजने के लिए Mail ID: nagfani81@gmail.com
Website: http:naagfani.com

नागफनी

	पृष्ठ क्रमांक
संपादकीय.....	01
साहित्यिक विमर्श	
1. कन्नड भाषा और साहित्य का सांस्कृतिक संदर्भ-प्रो.संजय एल.मादार	2-4
2. मध्यकालीन हिन्दी काव्य : राम और कृष्ण के शब्द चित्रों के संदर्भ में-डॉ.नीतू परिहार	5-6
3. उदय प्रकाश की कहानियों में उदारीकरण की संस्कृति-डॉ.सुनील पाटिल	7-8
4. साहित्य के मानदण्ड एवं प्रेमचंद के निबंध-डॉ.अमित कुमार तिवारी	9-11
5. रमेश पोखरियाल 'निशंक' के काव्य में राष्ट्रीय चेतना के स्वरः-डॉ.संगिता चित्रकोटी	12-14
6. अज्ञेय की काव्य संवेदना : एक अन्तर्यात्रा-डॉ.वीणा जे	15-17
7. 'राम की शक्तिपूजा' मनोभावों की समग्रता का प्रबल साक्ष्य-त्रिनेत्र तिवारी	17-18
8. विष्णु प्रभाकर के स्वागत नाट्य (मोनो लॉग) का शिल्पगत अध्ययनः डॉ.कल्पना मौर्य	19-20
9. प्रेमचंद और आज का भारतः किसान विमर्श के संदर्भ में- बैशाली गायकवाड	21-22
10. निराला और उनकी राष्ट्रीय चेतनाः डॉ.समयलाल प्रजापति/डॉ.निरपत प्रसाद प्रजापति	23-24
11. 'सुख' तलाशते साठोत्तर समाज का 'दुख'-डॉ.दीपक जाधव	25-27
12. भारतीय अन्नदाता की त्रासदी का उपन्यास 'अकाल में उत्सव'-डॉ.मृत्युंजय कोईरी	27-29
13. हिंदी कहानियों में वृद्ध विमर्श : यथार्थवादी चिंतन -डॉ.सुरेश सिंह राठौड	30-32
14. मुक्तिबोध और फैन्टेसी : 'अंधेरे में' कविता के संदर्भ में- आरती सिंह राठौर/डॉ.रेशमा अंसारी	33-34
15. रस का आधुनिक काव्य से संबंध - डॉ.कविता त्यागी	35-36
16. जयप्रकाश कर्दम के कथा साहित्य में लोकजीवन-सुनीता	37-38
17. इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यासों में सांस्कृतिक चिंतन के द्वारा राष्ट्रीय चेतना-श्रीमती मीना शर्मा	39-40
18. साहित्य से सिनेमा फिल्मांकन की समस्या पर विमर्श (हिन्दी सिनेमा के संदर्भ में)-संजय सिंह/डॉ.शाह आलम	41-43
19. 'नए इलाके में': नए इलाके की खोज करती कविताएँ-डॉ.अन्सा ए	44-46
20. स्वाधीनता आंदोलन और हिंदी की हास्य व्यंग्य कविता : डॉ.उर्विजा शर्मा	47-48
21. हिंदी साहित्य में विकलांगता का चित्रण-मोनी	49-52
22. निराला का अंग्रेजी साम्राज्य के खिलाफ विद्रोह-डॉ.कृष्ण बिहारी राय	53-54
23. इक्कीसवीं सदी के प्रतिनिधि उपन्यासों में राजनीतिक मूल्य-श्रीमती मालती देवी	55-57
24. 'मरंग गोडा नीलकंठ हुआ' : पर्यावरण चिंतन का महाकाव्य-डॉ.अंजू लता/आलिया जेसमिना	58-62
25. सुशीला टाकभौरे की कहानियों में उत्पीडन एवं जीवन संघर्ष -डॉ.कुलदीप सिंह मीना	63-65
26. ढाई बीघा जमीन : आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में-डॉ.जयंत बोबडे	66-68
स्त्री विमर्श	
1. इक्कीसवीं सदी की हिंदी कविता में स्त्री अस्मितामूलक प्रश्नों की संवेदना-डॉ.बलविंदर कौर	69-71
2. नारी अस्मिता के विविध आयाम-ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य-डॉ.नीरजा शर्मा	72-73
3. नारी अस्मिता और छिन्नमस्ता उपन्यास-प्रोफेसर आसाराम बेवले	74-76
4. स्त्री लेखन का नया प्रतिमानः स्त्री-भाषा-डॉ.यमुना प्रसाद रतूडी	77-79
5. 'रेत' उपन्यास में चित्रित स्त्री-डॉ. शीतल गायकवाड	80-81
6. कृष्णा अग्निहोत्री की 'और...और...औरत' आत्मकथा में नारी विमर्श-राकेश भील	82-83
7. स्त्री विमर्श के दायरे में 'बारबाला' का अनुशीलन-डॉ.मीना सुतवणी	83-86
8. नन्द चतुर्वेदी की कविता में स्त्री चित्रण-डॉ.विदुषी आमेटा/संगीता भारद्वाज	87-93
9. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ग्रामीण स्त्री जीवन का परिदृश्य :'बेनीमाधो तिवारी की पतोह'के विशेष संदर्भ में- बेबी विश्वकर्मा	94-96
10.वर्तमान समय में नारी की स्थिति-डॉ.पूजा शर्मा	97-98
11.अनामिका की कविता में स्त्री पक्षधरता-डॉ.उषस पी.एस.	99-101
12.'थेरीगाथा' में चित्रित स्त्री-जीवन की वैयक्तिक समस्याएँ- संजय यादव	101-102
13.शिवमूर्ति की कहानियों में स्त्री स्वर की अभिव्यक्ति-चंद्रावती	103-105
14.भगवानदास मोरवाल के उपन्यास 'वंचना'में व्यक्त नारी विचार-परेश सननसे/संजय कुमार शर्मा	106-107

'सुख' तलाशते साठोत्तर समाज का 'दुख'

-डॉ.दीपक जाधव
सहा.प्राध्यापक एवं हिंदी विभाग प्रमुख,
वेणूताई चव्हाण कॉलेज,
कराड, सांगली मो.9165526550

बुद्ध ने कहा 'दुख' जीवन की वास्तविकता है परंतु जीव और जीवन की संपूर्ण यात्रा सुख प्राप्ति की लालसा है। भले ही सामने का बृहत्तर पहाड़ दुख हो और उसकी चोटी पर उदयीमान होने वाला सूर्य का कमलकांत प्रतिबिंब सुख हो। इसके बावजूद मनुष्य की चेतना का लक्ष्य बृहत्तर पहाड़ न होकर कमलकांत प्रतिबिंब रहा है। वह पहाड़ों की पीड़ादायक यात्रा परिश्रम पूर्वक चढ़ता है। यात्रा के दरमियान आने वाले सुनहरे पलों, अल्हाददाई क्षणों एवं मिलने वाले अनुभव को नजरअंदाज करता, खाली हाथ गंतव्य तक पहुंचता है। दूर से लुभावना लगने वाला सुख हाथ आने पर पहाड़ की अगली चोटी पर उसका दूसरा प्रतिबिंब टिमटिमाते हुए दिखाई देने लगता है। इस दूसरे प्रतिबिंब के पीछे की दौड़-धूप, छटपटाहट, कष्ट बोध, आभाव ज्ञान, व्यर्थता बोध साठोत्तर समाज और कहानी का सत्य है।

साठ के बाद की बदली सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक स्थितियों का सीधा प्रभाव आम तथा मध्यवर्गीय जीवन पर न केवल दृष्टिगोचर होता है बल्कि इन स्थितियों के आक्रमण से वह प्रभावित होता है। इस संदर्भ में डॉ. के. एल. मालती लिखती है, "साठोत्तर युग में एक तरह से नयी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थितियां उभर आई। संयुक्त परिवारों का विघटन तेजी से हो रहा था। परंपरागत नैतिक आदर्श टूटते जा रहे थे और पारिवारिक संबंधों में बदलाव आ गया था। …….. साठोत्तर कहानियों में इन बदलते जीवन मूल्यों और परिवर्तित विचार भूमियों का यथार्थ चित्रण मिलता है।"[1] इन बदली भाव भूमियों को साठोत्तरी रचनाकार उसी तल्खी और यथार्थ रूप में अभिव्यक्त करता है।

साठोत्तरी रचनाकार का यथार्थ मात्र सामाजिक, देखा हुआ, कालजन्य या सर्वकालिक यथार्थ नहीं है। उसकी आस्था अनुभूत यथार्थ में अधिक है। वह यथार्थ को केवल व्यापक, सतही नहीं मानता बल्कि भाव भूमि के गहरे में उतरने की तैयारी करता है। साठोत्तरी नया लेखक परंपरागत यथार्थ से अधिक यथार्थवादी हुआ है। परंपरागत यथार्थ एवं साठोत्तरी रचनाकार के यथार्थ के बारे में सं. मधुकर सिंह लिखते हैं, " नया लेखक यथार्थ के इस रूप का गुलाम नहीं है। 'वस्तु' का 'यथार्थ' और क्या होता है सिवा उस 'यथार्थ' के जिसे वह देखता और महसूस करता है और 'महसूस' करने की इसी प्रक्रिया में उसे शक्ल देता है। वह 'शक्ल' जो 'यथार्थ' की भी है और उसकी अपनी भी।"[2]

साठोत्तर कहानीकार काशीनाथ सिंह की कहानी 'सुख' भोला बाबू के जीवन के तथाकथित सफल होने और सुख से जीवन बिताने की कहानी है। भोला बाबू पहाड़ी इलाके में जीवन भर तार बाबू की नौकरी करते हैं। इलाके भर के गांवों के चक्कर लगाते उनका जीवन बिता है और सप्ताह भर पहले वह नौकरी से वापस आए हैं। एक शाम कमरे में अखबार पढ़ रहे थे कि एक नन्ही किरण उनके गंजे सिर पर पड़ी। उन्होंने देखा सूरज पहाड़ी के पीछे कहीं गायब हुआ था लेकिन वह नन्ही किरण उनके सिर को गर्माहट दे रही थी। जैसे किसी बच्चे ने गर्म और गद्देदार हथेली सर पर रखी हो।

वे उठकर बाहर आते हैं। बाहर की हरी घास लाल थी। चार दिवारी लाल थी। यहां से सूरज दिखाई दे रहा था। " पहाड़ियों के कुछ ऊपर, बादलों के कहीं आसपास! ताड़ और बाबूल के बीच में। उन्होंने स्वयं पर निगाह डाली-मारकीज का सफेद कुर्ता गुलाबी हो उठा था। वे मुस्कुराए,' देखो, दुनिया में क्या-क्या चीजें हैं। कितनी अच्छी-अच्छी चीजें।" ' उन्होंने दूर तक नजर घुमाई। झोपड़ियां लंबी हो गई थी। मंडई लंबी होकर मंदिर को घूम रही थी। मंदिर के पास की गाय लाल है या सफेद, वे तय नहीं कर पाए। सारा नजारा देख वे मुस्कुरा उठे।

भोला बाबू का ध्यान सूरज पर जाता है। सूरज का गोला छोटा बड़ा हो रहा था। वे अपनी पत्नी को आवाज देते हैं और बाहर बुलाते हैं। उनके चेहरे पर बच्चों से चमक है। वे पत्नी को सूरज का लाल-लाल गोला बड़े चाव से दिखाते हैं। पर पत्नी को उसमें कुछ भी विशेष नहीं लगता। भोला बाबू उखड़ जाते हैं और डांटते हुए पत्नी को 'चुल्हा फुंकने' की बात करते हैं। पत्नी डर कर चली जाती है लेकिन भोला बाबू के मन में विचार आते हैं, "सूरज, बादल, बादलों पर उभरते रंग, रंगों पर खींचती धारियां, पहाड़ियां, पहाड़ियों के सामने वाले हिस्से का धुंधलापन, धुंधलापन के बिल्कुल ऊपर-चोटी पर लाल कुल से का क्षीण होना…..। वे जिंदगी भर तार बाबू रहे- उन्होंने सोचा। पहाड़ियों के इस जिले में ही रहे। उनसे कोई गांव नहीं छुटा, कस्बा नहीं छुटा, शहर नहीं छुटा। लेकिन यह सूरज! अब तक कहां था? यह शाम आखिर किधर थी?"[3]

भोला बाबू सूरज तथा प्रकृति का अजूबा बच्चों को दिखाना चाहते हैं लेकिन वे गायब थे। रास्ता चलते ऊंटवाले को वे नजारा दिखाना चाहते हैं। पर वह निश्चिंत बैठे बीड़ी पी रहा था। भोला बाबू की बातें उसके समझ में नहीं आ रही थी। उसे भोला बाबू की बातों में बिल्कुल रस न था। बोला बाबू गुस्सा हो उसे गाली देते हैं।

सूरज डूब जाता है और भोला बाबू उदास हो जाते हैं। वे धोती पहन, छड़ी ले चुपचाप बाहर निकल जाते हैं। उन्हें लगता है कि आज की इस घटना का पता सभी को होना चाहिए। वे अपने मित्र माधव मुख्तार से मिलने निकलते हैं कि रास्ते में बीज गोदाम के पास जिलेदार साहब दिखाई देते हैं। जिलेदार साहब को एकांत में ले जाकर भोला बाबू कहते हैं, "आज का सूरज ऐसा लाल… ऐसा खूबसूरत कि आपसे क्या कहूं? सारी धरती लाल हो गई थी जिलेदार साब! आपने

देखा था न?"5

जिलेदार साहब सपाट लहजे में कहते हैं कि यह नई बात नहीं है, ऐसा रोज ही होता है। भोला बाबू के उत्साह को कुछ धक्का सा लग जाता है। वे वहां से आगे निकलते हैं। बाजार से परिचित-अपरिचितों के बीच से चुपचाप चलते हैं। उन्होंने सूरज के बारे में किसी से कुछ नहीं कहा जबकि वह कहना चाहते थे।

भोला बाबू सोचते-विचारते माधव की गली में उड़ते हैं। गली के अंधेरे में बाल्टी हाथ में लिए आता हुआ माधव उन्हें दिखता है। आवाज देने पर पता चलता है, वह माधव न होकर उनका नौकर सोहन है। माधव के न निकलने से भोले बाबू और भी निराश हो जाते हैं। वे अपनी बेचैनी में सोहन से पूछते ही है कि सूरज देखते हो या नहीं? सोहन के बातों में सूरज के स्थान पर 'सुरजा तेली' का जिक्र आता है। सोहन द्वारा भी उनकी बातें ना समझने से वह झल्ला उठते हैं।

भोला बाबू घर आकर चुपचाप बिस्तर पर लेट जाते हैं और मन ही मन तय करते हैं कि वे कल सभी को सूरज दिखाएंगे। लोगों का सूरज में, प्रकृति में रुचि न होना, उनके लिए चिंता का विषय बन जाता है। उन्हें लगता है कि दिन-ब-दिन लोगों को क्या होते जा रहा है। भोला बाबू सोचते हैं, " कल शाम होगी। वह सभी लोगों को बुलाएंगे। सूरज दिखाएंगे। और समझाएंगे कि देखो, दुनिया में चुल्हा, भोजन, कचहरी, ऊंट और दूध ही सब कुछ नहीं है। सूरज भी है। वह पहाड़ियों के ऊपर होता है। ताड़ों के बीच में आता है। फिर कांपता है। और फिर वह क्षण भी आता है जब वह पहाड़ियों के पीछे जाता है। और डूबने के पहले एक मुलायम किरण तुम्हारे गंजे सिर पर छोड़ जाता है।"

सूरज और सूरज के डूबते बिंब से प्रकृति में आए मनोहरी बदलाव को खुली आंखों से, पूरी संवेदना से न देख पाने का 'दुख' असल में औरों का नहीं बल्कि भोला बाबू का अपना है। घर काम में व्यस्त पत्नी, ऊंट पर सवार आदमी, जिलेदार साहब, माधव का नौकर सोहन या बाजार के लोगों के लिए सूरज भले ही आकर्षण का उतना प्रबल कारण ना बने लेकिन उनके लिए वह भोला बाबू की तरह अजूबा नहीं है। वे सूरज को रोज देखते हैं लेकिन इसी पहाड़ी इलाकों में सालों नौकरी करते हुए, इस गांव से उस गांव भोला बाबू घूमते रहेपर काम की सनक, जिम्मेदारी के बोझ, जीवन की ओर देखने के एकांगी विचार और 'सब कुछ परिवार के सुख के लिए' के भाव के चलते वह खुद डूबते सूरज को, उसकी गर्माहट को, गंजे सर पर बच्चे सा हाथ रखने वाली किरण को महसूस ही नहीं कर पाए थे। भोला बाबू की छटपटाहट, बेचैनी, झल्लाहट जितनी बाहरी है, उससे कई अधिक आंतरिक है।

भोला बाबू का यथार्थ केवल बाहरी यथार्थ नहीं है, जितना बाहरी है उससे अधिक व्यापक और आंतरिक है। यह एक व्यक्ति का दुख नहीं है। वह साठोत्तर कहानी, कहानीकार और रोजी-रोटी कमाने में ही जीवन की सार्थकता ढूंढने वाले समस्त वर्ग का यथार्थ है। साठोत्तर कहानी के इसी यथार्थ चित्रण की विशेषता के बारे में डॉ. लक्ष्मीलाल वैरागी लिखते हैं, " समकालीन कहानी के इन कहानीकारों ने नई कहानी से भी आगे बढ़कर यथार्थ को पूर्ण, निर्मम रूप में स्वीकार किया तथा उसे अपनी वैचारिकता से युक्त किया। यह यथार्थ का नया रूप है। जहां कहानी जीवन के गंभीर प्रश्न और समस्याओं से जूझती है।"7

भोला बाबू बिस्तर पर पड़े-पडे ही अपना हाथ सिर पर ले जाते हैं। वह हिस्सा बिल्कुल ठंडा पड़ा था जिसमें संध्या के किरण के गर्माहट लाई थी। किसी के आने से उनकी तंद्रा टूटती है। वह पाते हैं कि मेज पर भोजन की थाली रखी है और चारपाई पर पत्नी बैठी है। वे न तो पत्नी से बात करते हैं। न ही उसके सवालों के ठीक से जवाब देते हैं और न ही उसे आवश्यक समझते हैं। पत्नी उन्हें खाने के लिए उठाना चाहती है। पर वह ऐलान करते हैं कि वह आज खाना नहीं खाएंगे। वे निरुत्तर, उदास भाव से पड़े रहते हैं। पत्नी को संबोधित करते हुए कहते हैं, " देखो, कहने को यह बीवी है। यह बेटा है। यह बेटी है। यह मकान है। यह जायदाद है। यह दोस्त है। यह नातेदार है। लेकिन सच पूछो तो कोई किसी का नहीं।"8 जिन रिश्तों की खातिर मरते-खपते रहे, उसकी निस्सारता के साथ ही भोला बाबू की निस्सहायता व्यक्त होती है।

"जब मेरा कोई दुख नहीं समझ सकता तो कैसी बीवी और कैसा बेटा।"9 भोला बाबू की बातें सुन पत्नी की आंखों में आंसू आते हैं। भोला बाबू का स्वर भी भर्रा जाता है। भोला बाबू कहते हैं, नहीं, मेरा कोई नहीं है। पत्नी रोने लगती है। बच्चे सीसकने लगते है। भोला बाबू उन्हें जाने के लिए कहते हैं। उन्हें खाने-पीने के लिए कहते हैं। पर खुद के खाना न खाने पर अडिग रहते हैं। वे दूसरी ओर करवट ले तकिए में मुंह घूसेड सिसकने लगते हैं। पत्नी जोर से रो पड़ती है। बच्चे भी चिल्ला उठते हैं। भोला बाबू भी फूटकर रोने लगते हैं। लेकिन " रोने वालों में सबसे ऊंचा और दुखी स्वर भोला बाबू का था।"10

काशीनाथ सिंह कहानी के अंत में कहते हैं - रोने वालों में सबसे ऊंचा और दुखी स्वर भोला बाबू का था। अर्थात् भोला बाबू ने क्या खोया है इसका एहसास केवल भोला बाबू को है। उन्होंने घर-परिवार, जमीन-जायदाद, दोस्त-नातेदार सब के बारे में सोचा, पर अपने बारे में सोचना ही भूल गए। भोला बाबू का दुख समस्त मध्यवर्ग का दुख है जो परिवार के जीवन साधन जुटाने में अपने जीवन को होम कर देता है और इसे ही जीवन की सार्थकता समझता है। परिवार हेतु साधन जुटाने की प्रक्रिया में कभी-कभी वह खुद परिवार से कट जाता है तो कभी परिवार ही उसे अपनी परिधि से बेदखल कर देता है(वापसी- उषा प्रियवंदा)। सारा जीवन घर-परिवार, बीवी-बच्चों की चिंता में डूब जाता है। इन सारी जिम्मेदारियों, दुश्चिंताओं में भोला बाबू जैसे तमाम लोग सहर्ष उतरते हैं, गहरे-गहरे आगे बढ़ते हैं, सांस लेने की फुर्सत तक नहीं लेते। अपनी ही धुन में चले जाते हैं। क्या परिवार, दोस्त, समाज समझ पाता है कि उन्होंने कितना कुछ खोया है। कुछ कि सरलता के लिए अपना जीवन दांव पर लगाया है।

भोला बाबू के मन में एक ओर जीवन व्यर्थ गांवाने का गम है तो दूसरी ओर उसके अपने कहे जाने वाले लोग उसे समझ ही नहीं पा रहे हैं, इस बात का रंज है। उसके लिए यह सदमा भी है कि अपने कहे जाने वालों को पता ही नहीं या वे समझने में असमर्थ है कि वह क्यों दुखी है। साठोत्तर कहानी, कहानीकार एवं समाज के इस स्थिति के बारे में सुनील कुमार द्विवेदी लिखते हैं, " साठोत्तर कहानियों ने मानवीय स्थिति से मानवीय संबंधों की विकास यात्रा के सामाजिक आधारों की खोज की है। साठोत्तर कहानीकार कहानी विधा के अंतर्गत शब्दों में जीवन का प्रतिबिंबन करने के क्रम में अपने परिवेश से अपनी अनुभूति की यात्रा करता है। वहां वह मानवीय संवेदनाओं की जांच पड़ताल करता नजर आता है।"11

भोला बाबू का 'दुख' सुख की राह पर आंख मूंदे चलने का दुख है। उसमें जीवन की परंपरागत स्थितियों से ठगे जाने की टीस है। व्यर्थता बोध की तीव्रता है। किसी से अपनी स्थिति साझा न कर पाने की घुटन है। कितने ही ऐसे क्षण जिन्हें जीना संभव था, उन्हें खोने से उपजी रिक्तता है। और वह उम्र के इस पड़ाव पर खड़े हैं जहां जीने की लालसा का विशेष महत्व नहीं है। और जो बीता है, उसे वापस नहीं लाया जा सकता। इन स्थितियों से जीवन कभी न खत्म होने वाले अवसाद से भर जाता है। निसंदेह काशीनाथ सिंह भोला बाबू के माध्यम से मध्यवर्गीय कामकाजी आदमी के जीवन को यथार्थ भावभूमि पर उतारने में सफल हुए हैं।

संदर्भ :

1.साठोत्तर हिंदी कहानी - डॉ. के. एल. मालती - लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद - प्र. सं. 1999 पृ. 99

2.साठ के बाद की कहानियां - सं. मधुकर सिंह - चैतन्य प्रकाशन, नई दिल्ली-110049 प्र. सं. 2010 पृ.8

3.वही, पृ. 41

4.वही, पृ. 43

5.वही, पृ. 45

6.वही, पृ. 47

7.हिंदी भाषा और साहित्य का इतिहास - डॉ. लक्ष्मीलाल वैरागी - संघी प्रकाशन, जयपुर प्र. सं. 1999 पृ. 361

8.साठ के बाद की कहानियां - सं. मधुकर सिंह - चैतन्य प्रकाशन, नई दिल्ली-110049 प्र. सं. 2010 पृ. 48

9.वही, पृ. 48

10.वही, पृ. 48

11.ज्ञानरंजन की कहानियों में मध्यवर्ग का स्वरूप और विश्लेषण (शोध ग्रंथ, 2007) - सुनीलकुमार द्विवेदी - उत्तर बंगाल विश्वविद्यालय, सिलीगुड़ी पृ.53

12.लमही - प्र. सं. विजय राय - अंक जुलाई-सितंबर, 2011 -विवेक खंड, गोमती नागर, लखनऊ - 226010

13.वागर्थ - सं. एकांत श्रीवास्तव, कुसुम खेमानी - अंक सितंबर, 2013 - भारतीय भाषा परिषद, 36ए, शेक्सपियर सारणी, कोलकाता - 17

14.हिंदी साहित्य संक्षिप्त इतिहास - शिवकुमार मिश्र - वाणी प्रकाशन, 21ए, दरियागंज, नई दिल्ली - 02

भारतीय अन्नदाता की त्रासदी का उपन्यास 'अकाल में उत्सव'

-डॉ. मृत्युंजय कोईरी
रांची, झारखंड
मो.07903208238

भारत के अन्नदाता कहलाने वाले किसान का जीवन अत्यंत दयनीय है। वे आज मौसम के मार से, बीज-खाद, व्यापारी, बिचौलिया, भ्रष्ट अधिकारी और सरकार की कुव्यवस्था के कारण आत्महत्या करने पर मजबूर हैं। पंकज सुबीर ने 'अकाल में उत्सव' उपन्यास में सूखा पानी का एक छोटा किसान रामप्रसाद के जरिये भारतीय अन्नदाताओं की त्रासदी को उजागर किया है।

भारत के अन्नदाता अपने पुत्र को जमीन का लगान, बैंक का लोन, सोसायटी और सूदखोरों का कर्ज छोड़ जाते हैं। 'अकाल में उत्सव' उपन्यास के किसान रामप्रसाद के माथे पर भी पिता का कर्ज है। सूदखोरों का अपना गणित होता है, जो बहुत ही विचित्र है। यथा- ''आप मुझसे दस हजार रुपये अभी ले रहें हैं, जिनको आप छः माह बाद एक हजार रुपये प्रति महीने के हिसाब से ब्याज देकर लौटाने की बात कर रहें हैं, तो आपको अभी दस हजार नहीं मिलेंगे, आप दस हजार पर अँगूठा लगाएँगे और मिलेंगे आपको केवल चार हजार। छः हजार तो ब्याज के कट गए न भाई। अब छः महीने बाद केवल दस हजार ही लौटाना है आपको।''[1]

रामप्रसाद दिन-रात अपने खेतों में काम करता है। पत्नी कमला बड़े किसानों के खेतों में मजदूरी करती है, तब कहीं जाकर जैसे-तैसे घर में दो वक्त की रोटी नसीब होता है। वहीं रामप्रसाद जैसे किसान बिजली बिल जमा करने एवं बीज, खाद खरीदने के वास्ते अपने गहने को सोनार के वहाँ गिरवी रखते हैं। पहले सोना को फिर चाँदी को। यदि किसान गिरवी रखने की जगह बेच दें तो अच्छा है। क्योंकि वे आगामी फसल को देखकर गिरवी रखते हैं। लेकिन फसल ओले या पानी से नष्ट हो जाती है। कभी फसल हुई भी तो व्यापारी के हाथों से बहुत कम पैसे मिलते हैं। गिरवी का सोना व चाँदी ब्याज की रकम में ही डूब जाता है। साहूकार का गणित देखिए- ''देख भाई तीन महीने का हो गया ब्याज, तो ढाई सौ के हिसाब से ढाई सौ तीसा पन्द्रह सौ और उसमें जोड़े चार सौ पिछले तो पन्द्रह सौ और चार सौ जुड़ के हो गए छब्बीस सौ। उनमें से तूने बीच में जमा किए तीन सौ, तो तीन सौ घटे छब्बीस सौ में से तो बाकी के बचे अट्ठाइस सौ, ले माँड दे अँगूठा अट्ठाइस सौ पे। समझ में आ गया ना हिसाब? कि फिर से समझाऊँ?''[2]

वर्तमान समय में हर चीजों की कीमतों में इज़ाफ़ा हुआ है। लेकिन किसान की फसल की कीमत में नहीं के बराबर वृद्धि हुई है। 1975 में सोना की कीमत 540 रुपये का दस ग्राम आता था और आज 2022 में 50 हजार के आसपास झूल रहा है। 1975 में गेहूँ का न्यूनतम मूल्य सरकार की ओर से तय था। लगभग एक क्विंटल का सौ रुपये। तब किसान पाँच क्विंटल गेहूँ बेचकर दस ग्राम सोना खरीद सकता था। किंतु आज 25 क्विंटल गेहूँ पर दस ग्राम सोना खरीद सकता है। आज एक लीटर सरसों तेल खरीदने के वास्ते सरकारी रेट में लगभग दस किलो धान बेचना पड़ता है। देश के अन्नदाता आज खेत के अनाज से खुद का पेट नहीं भर सकते हैं। देश के अन्नदाता की दयनीय स्थिति उपन्यासकार के शब्दों में- "रामप्रसाद चौके में